P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-5* January- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

राज्य राजनीतिक व्यवस्था में जातीय दबाव समूह (राजस्थान के संदर्भ में एक अध्ययन)

अंजना अग्रवाल
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
शिक्षा शास्त्र विभाग,
संजय टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज,
लालकोठीस्कीम, जयपुर, भारत

सारांश

लगभग 200 वर्षों की ब्रितानी दासता झेलने एवं एक दीर्घकालीन एवं बहुआयामी संघर्ष के उपरान्त 15 अगस्त, 1947 को भारत को राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त हुयी। भारत के संदर्भ में राजनीतिक व्यवस्था के उदय तथा ऐतिहासिक विकास ने दलीय व्यवस्था के रूप को निश्चित किया है। प्राचीन इतिहास के प्रारम्भिक काल के समाज में जहां जाति की अनुपस्थिति थी वहीं वर्ण व्यवस्था में योग्यता की प्रधानता थी जिसे राजनीतिक एवं सामाजिक स्थिरता के मोहपाश ने शनैः–शनैः आच्छादित कर दिया और मध्यकाल से राजनीतिक व्यवस्था में जाति की एक निर्णायक भूमिका हो गयी। वर्तमान में जातिगत समाज के हित संवर्द्धन भावना में वृद्धि हुई है और राजनीतिक लाभ प्राप्त कराने की अनौचित्यपूर्ण प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिला है जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक एवं राजनीतिक परिदृश्य में परिवर्तन आ रहे हैं।

मुख्य शब्द : राज्य, राजनीतिक व्यवस्था, दबाव समूह, जातोय हित।

प्रस्तावना

'यथा राजा तथा प्रजा' की लोकोक्ति राजनीतिक एवं सामाजिक व्यवस्था के प्रतिबिम्ब प्रदर्शक हैं। ये एक–दूसरे की पूरक हैं और इनकी पारस्परिक अन्तः क्रियायें एक–दूसरे की संरचनाओं, कार्यों, गतिविधियों एवं प्रक्रियाओं को प्रभावित करती है। अतः समाज में जैसी राजनीतिक व्यवस्था होगी वह सामाजिक व्यवस्था में प्रतिबिम्बित होगी और राजनीतिक व्यवस्था इससे अलग नहीं हो सकती। इस परिदृश्य में यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होता है कि जहां राष्ट्रीय राजनीति में जातिगत राजनीति की गूंज समस्त चुनावी वातावरण में स्पष्ट सुनाई देती है क्या वहां राज्य की राजनीति जातिगत राजनीति की भूमिका से अछूती रह सकती है?

राजस्थान की राजनीति भी जाति व्यवस्था से अछूती नहीं हैं क्योंकि जाति के लौकिक संगठन के रूप विश्लेषण किया जाये तो एक ओर स्थानीय निकाय प्रशासकीय रूप में तथा दूसरी ओर जातीय गठजोड़ एवं प्रतिद्वन्द्विता राजनीतिक रूप से प्रदर्शित होती है जाति एवं राजनीति के मिश्रण से जातीय व्यवस्था का राजनीतिकरण हो रहा है और सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक सभी क्षेत्रों में राज्य राजनीति में आने वाले राजनीतिक नेताओं का वर्चस्व जातिगत होता जा रहा है। जाति के आधार पर उम्मीदवार का चयन होने लगा है और विभिन्न जाति समूह के लोग अपनी जाति के उम्मीदवार को मत देते हुये पाये जाते हैं। इन जातीय समूहों ने दबाव समूहों का रूप धारण कर लिया है।

अब तक की सभी विधानसभाओं के चुनाव नतीजों का विश्लेषण करें तो यह साफ दिखाई देता है कि राजस्थान की राजनीति भी पूरी तरह जाति से प्रभावित है वह भी मुख्य रूप से जाट व राजपूत जाति से। ये प्रमुख जातीय समूह राज्य राजनीति के साथ–साथ राष्ट्रीय राजनीति के निर्धारित कारके के रूप मे कार्य कर रहे हैं और राजस्थान की राजनीति में अपनी प्रमुख भूमिका अदा कर रहे हैं। यद्यपि प्रतिष्ठित जातीयां में प्रतिस्पर्धा एवं गुटबन्दी बढ़ी है। ये जातीय गुट जाति के लोगों से गठबंधन करने लगे हैं, जिससे राजनीति में जातीय हितों के लगाव में कमी हुई है। इसके अतिरिक्त शिक्षा, शहरीकरण, निजीकरण इत्यादि नई आकांक्षाओ और भौतिक उन्नति की धारणाओं के अनुरूप जातिगत भावना कमजोर पड़ने लगी है और राजनीति में आधुनिकता का समावेश हुआ है, फिर भी राज्य राजनीति में जाति का प्रभाव सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता और विकास के लिए घातक तत्व है। अतः राजस्थान की राजनीति में जातीय दबाव समूहों की आज भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है जिसे शोध विषय के चयन का आधार बनाया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य

1. क्या इन जातीय समूहों में राजनीतिक समावेश है?
2. इन सामाजिक दबाव समूहों का स्वरूप क्या है?
3. क्या ये समूह अतिपिछड़े वर्ग के हित संरक्षण के उद्देश्य से परित है और उनका प्रतिनिधित्व करते हैं?
4. क्या राज्य के विधायी एवं प्रशासकीय कार्यकलाप इन समूहों से प्रभावित होते हैं?

अध्ययन पद्धति

शोध के अध्ययन हेतु आत्मनिष्ठ व वस्तुनिष्ठ पद्धति को अपनाया गया है ताकि विषय की सुरूचि हर संभव स्तर पर बनी रह सके। अध्ययन मे कतिपय मूल ग्रंथों को आधार बनाने के साथ ही विषय क्षेत्र के विचारकों द्वारा लिखित पुस्तकों, लेखों, भाषणों के विवेचन को अध्ययन का प्राथमिक स्रोत आधार बनाया गया है।

साथ ही द्वितीयक स्रोत के रूप में विभिन्न ख्यातिनाम राजनीति शास्त्रियों, शासकों, विधायकों, लेखकों, सामाजिक कार्यकर्त्ताओं की पुस्तकों, लेखों, पत्र–पत्रिकाओं की पाठ्य सामग्री का अध्ययन तथा सामाजिक शोधकर्त्ताओं व विभिन्न अध्ययनों से प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण को प्रयुक्त किया गया है।

राज्य–राजनीति एवं जातिगत दबाव समूह

राजस्थान भारत के राज्यो में से एक है जो उत्तर पश्चिमी भाग में स्थित है यह $23^0 3'$ से $30^0 12'$ उत्तरी अक्षांश व $69^0 3'$ से $78^0 17'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य फैला हुआ है। राजस्थान घनत्व की दृष्टि से देश में उन्नीसवां व जनसंख्या की दृष्टि से आठवां स्थान रखता है। राज्य में राजनीतिक पृष्ठभूमि मे राजपूत वर्ग की विशेष भूमिका रही है तो सामाजिक संरचना में वर्तमान में जाट समुदाय प्रमुखता प्राप्त कर रहा है जो कि सामान्यतः भूमिधर है और अन्य पिछड़ा वर्ग का प्रमुख घटक है। वहीं आर्थिक संरचना में व्यापारी वर्ग का विशेष महत्त्व है।

अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के बहुसंख्यक लोग भूमिहर कृषक हैं किन्तु ये राजाओं, महाराजाओं के सेवीय वर्ग रहे हैं। प्रजातांत्रिक पद्धति द्वारा समाज के इन वर्गों को शासन सत्ता में भागीदार बनाने का प्रयास किया गया है। इसके बावजूद समाज के इन विभिन्न वर्गों में राजनीतिक एवं सामाजिक प्रतिस्पर्धा में वृद्धि हुयी है। फलस्वरूप विभिन्न समुदायों ने अपने–अपने वर्गों के हित साधने के लिए सामाजिक संगठनों जैसे– सर्वब्राह्मण महासभा, वैश्य महासभा, जाट महासभा, राजपूत महासभा, गुर्जर महासभा इत्यादि का गठन किया है और सरकार के प्रति जातीय दबाव समूह के रूप में खड़े हो गये हैं। दूसरी तरफ राज्य को प्रजातांत्रिक पद्धति के द्वारा सामाजिक न्याय की वृद्धि में तत्पर होना चाहिए था तथा समाज के पिछड़े व्यक्ति के उन्नयन का साधन होना चाहिए था वहां वह जातिगत बहुसंख्यक मत के आधार पर स्वार्थपरता के दल–दल में फंसता चला गया है और समाज में साधन संपन्न व साधन विपन्न के बीच वर्ग विभाजन का कारण बना है।

राजनीतिक दृष्टि से प्रत्येक बहुसंख्यक जातिगत समूह राजनीतिक दबाव समूह का स्वरूप धारण करता प्रतीत हो रहा है जिसे राज्य की राजनीतिक शक्ति भी रोकने में असमर्थ प्रतीत हो रही है।

राज्य में जातिवाद की जड़ें गहरी होती जा रही है। मंत्रियों के चयन में भी जातिवाद साफ दिखाई दे रहा है। राजनीतिक दलों में जातीय आधार पर कोई रिकॉर्ड नहीं मिलता है केवल घटनाओं के आधार पर ही जातीय निष्कर्ष निकाला जा सकता है। राजनीतिक दलों में लोकसभा व विधानसभा के लिए प्रत्याशियों के चयन और निर्वाचन में भी जातिवाद का प्रभाव साफ दिखाई दे रहा है।

सन् 1952 में सम्पन्न पहले आम चुनाव से लेकर 2013 तक सम्पन्न राज्य विधानसभा के चुनाव परिणामों का विश्लेषण किया जाये तो जातिवाद की शक्ति स्पष्ट होती है। रियासतों के एकीकरण तथा राजस्थान निर्माण के बाद भी सामंतों को सत्ताविहीन होना स्वीकार नहीं था। उन्होंने सामान्य राजपूतों को साथ लेकर 'प्रजा' से पीढियों तथा युगों के संबंधों के आधार पर लोकतांत्रिक मार्ग से सत्ता प्राप्त करने का सपना खोया नहीं था। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम की पार्टी 'कांग्रेस' के विरूद्ध चुनाव लड़कर 160 सदस्यों के सदन में उसके एक तिहाई से केवल दो कम अर्थात् 51 स्थानों पर कब्जा किया। कांग्रेस के टिकट पर केवल तीन राजपूत ही जीते थे। दूसरे आम चुनाव से सामंतों की शक्ति कमजोर होने लगी राजपूत केवल 26 चुने गये जिनमें भी 15 कांग्रेस के थे और जाट जो 1952 में कुल 12 थे बढ़कर 1957 में 23 हो गये। अनुसूचित जाति एवं जनजाति के आरक्षित निर्वाचन क्षेत्रों को छोड़कर पहले चार आम चुनावों में मुख्य रूप से जाट, राजपूत, ब्राह्मण तथा वैश्य ही चुने जाते रहे। सन् 1967 के चौथे आम चुनाव तक राजपूत विधायकों का वर्चस्व रहा, जो बाद में घटता चला गया और उसका स्थान जाटों ने ले लिया। सन् 1998 के लोकसभा चुनाव के दौरान पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा जाटों को आरक्षण प्राप्त हो जाने के बाद उन्होंने पुनः शक्ति तो प्राप्त कर ली लेकिन उनके पास कोई नामी जाट नेता नहीं रहा । परन्तु फिर भी आरक्षण प्राप्त करने की बढ़ती मांग के कारण राजस्थान में जातिवाद बढ़ रहा है। राज्य की प्रमुख जातीयां राजनीतिक आधार पर बंट रही है। गुर्जर आरक्षण आंदोलन इसका ज्वलन्त उदाहरण है। इस कारण जातीयों में ईर्ष्या एवं द्वेष बढ़ जाने से अपेक्षित राजनीतिक लाभ नहीं मिल रहा है। ये सभी जातीयां अपने हितों एवं स्वार्थों की रक्षा व मांग पूर्ति हेतु दबाव समूह के रूप में हमारी राजनीतिक व्यवस्था के सम्मुख खड़ी हैं। यह संगठित समाज की विश्रृंखलित होती शक्ति राज्य के लिए घातक है। राजनीतिक नेतृत्त्व के जातिवादी आधार को निम्नलिखित तालिका द्वारा समझा जा सकता हा

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-5* January- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

राजस्थान में चुने गये विभिन्न जातियों के विधायक

(सन् 1952 से 2013 तक)

वर्ष	सीटों की संख्या	जाट	राजपूत	ब्राह्मण	वैश्य	मुस्लिम	एससी	एसटी	ओबीसी	यादव	गुर्जर	विश्नोई	सिख/सिंधी/पंजाबी	माली	कायस्थ	सिरवी
1952	160	12	54	22	15	2	10	6	4	4	2	—	1	2	1	—
1957	176	23	26	24	14	4	16	14	6	2	1	2	2	1	1	—
1962	176	24	36	27	18	3	29	20	5	1	—	2	3	1	3	—
1967	184	28	29	26	22	6	34	20	7	1	3	3	3	—	2	—
1972	184	33	22	21	22	6	32	22	11	2	2	4	5	1	2	—
1977	200	32	21	24	24	9	36	25	8	3	8	2	6	—	1	1
1980	200	30	19	28	20	10	35	26	9	3	8	3	5	1	2	1
1985	200	32	19	34	12	8	34	26	12	2	9	3	4	3	2	—
1990	200	32	19	19	18	8	35	29	11	3	12	4	6	2	1	1
1993	200	38	23	21	18	5	33	27	12	2	9	3	7	1	—	1
1998	200	35	18	20	17	13	33	24	12	3	10	5	5	3	1	1
2003	200	27	22	15	18	5	33	24	53	2	8	2	5	2	1	—
2008	200	29	26	14	17	12	34	31	18	3	7	2	4	2	1	—
2013	200	30	26	15	20	2	36	30	17	4	9	3	5	2	1	—

साहित्यावलोकन

प्रस्तुत अध्ययन से संबंधित साहित्य का विवरण इस प्रकार है – मौरिस डुवर्जर (संस्करण 1972) द्वारा लिखित पुस्तक पार्टी पॉलिटिक्स एण्ड प्रेशर ग्रुप्स में दबाव समूहों का विश्लेषणात्मक वर्णन। डॉ. एम.पी. राय एवं शशी के. जैन द्वारा लिखित पुस्तक ''भारतीय सरकार एवं राजनीति'' में दबाव एवं हित समूह, भारत में दबाव समूहों की प्रकृति, राजनीति पर उनका प्रभाव व भूमिका का वर्णन किया गया है। बी.एम. शर्मा ने (2004) ''भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक अध्ययन : एक अन्तः क्रियात्मक अध्ययन'' में बताया कि सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में जहां जाति की शक्ति कम हुई है कि वहीं राजनीति एवं सामाजिक कारकों ने जातियों के राजनीतिकरण को बढ़ावा दिया है। दनिक भास्कर के जयपुर संस्करण (2009) में प्रकाशित ''राज्यमंत्रिमण्डल का विस्तार'' शीर्षक भी जातीय आधार परन मंत्रिमंडल के विस्तार से संबंधित था। दैनिक भास्कर के ही जयपुर संस्करण (जुलाई 2009) में प्रकाशित ''आज गुर्जरों की महापंचायत, बैंसला आरक्षण विधेयक लाग् करने की मांग पर अडिग'' शीर्षक की जातिय दबाव समूह के रूप में आरक्षण के राजनीतिकरण को प्रदर्शित करता है।

उपरोक्त संदर्भित साहित्य व शोध अध्ययन से प्रेरित होकर शोधार्थी ने शोध विषय का चयन किया और यह जानने का प्रयास किया कि राज्य राजनीति में जातिगत दबाव समूहों की क्या भूमिका होती है।

निष्कर्ष

राजस्थान के निर्माण के साथ ही सैकड़ों वर्षों की सामंती व्यवस्था का अंत जहां हर्ष का विषय हैं वहीं लोकतंत्र की स्थापना हमें गौरवान्वित करती है। लोकतंत्र बहुत मजबूत है उसका ढ़ांचा गांव से लेकर राज्य व राष्ट्रीय स्तर तक पक्का बना हुआ है। यह केवल प्रशासनिक व्यवस्था के लिए ही नहीं बल्कि हरेक व्यवस्था के लिए कानूनी तौर पर स्थापित है। इन व्यवस्थाओं के पदों पर चुने जाने के लिए मतदाता को भ्रष्ट, भ्रमित करना या उसकी भावनाओं से खेलना आज का सुदृढ़ लोकतंत्र बन चुका है।

धर्म, जाति, सम्प्रदाय और क्षेत्र की कोई सीमा नहीं है उसका खुलकर उपयोग एवं दुरूपयोग सत्ता प्राप्ति के लिए किया जाने लगा है। कल का भविष्य क्या होगा कोई नहीं जानता? आगे परिवर्तन के लिए क्या आधार होगा कोई नहीं जानता? क्या पिछला इतिहास मार्गदर्शक बन पायेगा? कल तक का घटनाक्रम यूं तो इतिहास ही होता है परन्तु उनमें हुयी भूलें व उपलब्धियाँ भविष्य का मार्गदर्शन करती है। आज ये बुराइयां राजस्थान में महारोग बन चुकी है उससे वह निरोग हो पायेगा या नहीं यही संदेह जनक है।

निष्कर्षतः यह सही है कि राष्ट्रीय व राज्य स्तर पर सभी राजनीतिक दल अपने भाषणों में स्वार्थ सिद्धि व जातिवाद की खूब आलोचना करते हैं किन्तु वे उम्मीदवार के चयन, टिकट वितरण एवं मतदान व्यवहार इत्यादि में अपनी शक्ति का इस्तेमाल कर जातिवादी राजनीति को प्राथमिकता देते हैं। इन जाति आधारित हितों की भूमिका को समाप्त करने का प्रयास करना होगा अन्यथा राज्य राजनीति में जातिगत दबाव समूहों को एकमात्र निर्णायक की भूमिका अदा करने से कोई रोक नहीं सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

कोठारी, रजनीः कास्ट इन इण्डियन पॉलिटिक्स, ओरिएण्टल–लौंगमैन, नई दिल्ली, 1970

गोयल ओ. पी.: कास्ट एण्ड वोटिंग बिहेवियर, रितु प्रकाशन, नई दिल्ली, 1981

चौहान, ब्रिजराजः ए राजस्थान विलेज, एसोसियटेड पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, 1967

नाटाणी, प्रकाश नारायणःराजस्थान निर्माण केपचास वर्ष, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 1999

नारायण, इकबालः स्टेट पॉलिटिक्स इन इण्डिया, मीनाक्षीप्रकाशन, मेरठ, 1976

भंडारी, विजयः राजस्थान सामंतवाद से जातिवाद के भंवर में वाणीप्रकाशन, नई दिल्ली 2007

सिंह, सुनीलकुमारः जाति व्यवस्था : निरन्तरता एवं परिवर्तन, रावत प्रकाशन, जयपुर 2010

समाचारपत्रः राजस्थान पत्रिका, दैनिक भास्कर, जनसत्ता, डेलीन्यूज